मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता

दुनियां के मजदूरो, एक हो !

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है

दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा

नई सीरीज नम्बर 59 | मई 1993 | 1/-

लार्सन एन्ड टूब्रो में तालाबन्दी

12/4 मथुरा रोड़ स्थित लार्सन एन्ड टूब्रो स्विच गियर फैक्ट्री में 75 वरकर हैं और 75 का ही यहां स्टाफ है। ठेकेदारों के मजदूर अलग से हैं। मैनेजमेंट ने 14 अप्रैल से तालाबन्दी कर रखी है, पुलिस फैक्ट्री के अन्दर बैठी है और स्टाफ फैक्ट्री में ड्यूटी कर रहा है।

लार्सन एन्ड टूब्रो की मुख्य फैक्ट्री बम्बई में है। फरीदाबाद फैक्ट्री में काम 1977 में शुरू हुआ। यहां स्टाफ का वेतन तो बम्बई के स्टाफ के बराबर है लेकिन मजदूरों का वेतन बम्बई फैक्ट्री के मजदूरों के वेतन के तीसरे हिस्से से भी कम है। 14 साल से चल रही फैक्ट्री में अभी तक दो ही एग्रीमेन्ट हुई हैं।

मजदूरों ने जून 90 में मैनेजमेंट को डिमान्ड चार्टर दिया। मजदूरों की डिमान्डों पर बात करने की बजाय लार्सन एन्ड टूब्रो मैनेजमेंट ने दिसम्बर 90 में एक वरकर को नौकरी से निकाल दिया और 7 को सस्पैन्ड कर दिया ——ढाई साल बाद भी सस्पैन्ड वरकर सस्पैन्ड ही हैं। डिमान्डों पर बात करने से मैनेजमेंट का इनकार जारी रहने पर वरकर मामले को लेबर डिपार्टमेन्ट में ले गये। यहां भी बात नहीं बनी तब मामला चन्दीगढ़ भेज दिया गया। और चन्दीगढ में बैठे साहबों ने मजदूरों के डिमान्ड चार्टर को ही रद्द कर दिया। इस पर वरकर हाई कोर्ट गये। चीफ जस्टिस ने कुछ शर्तें रखी जिन्हें मजदूरों ने मान लिया। मैनेजमेंट ने डिमान्ड चार्टर पर बातचीत शुरू की पर बात आगे नहीं बढ़ी। 26 दिसम्बर 92 के बाद तो मैनेजमेंट ने बात ही नहीं की। उल्टे, मैनेजमेंट ने मजदूरों पर हमलेतेज कर दिये।

ड्यूटी आवर्स के बाद मैनेजमेंट ने मजदूरों के परसनल लॉकर हैक्सा से काटे। मार्च के आरम्भ में तीन और वरकर सस्पैन्ड कर दिये। मार्च में ही फैक्ट्री से बाहर ठेकेदारों को वह काम भी देना शुरू कर दिया जिसे फैक्ट्री में स्किल्ड वरकर करते थे। मजदूरों ने कोई स्लो डाउन नहीं किया था पर डिमान्ड चार्टर को रफा-दफा करने के लिये मैनेजमेंट ने स्लो डाउन का आरोपलगाया और 26 मजदूरों के मार्च माह के वेतन में कटौती की। फिर 13 अप्रैल को मैनेजमेंट ने मजदूरों पर टूल डाउन स्ट्राइक का आरोप लगाया और 14 अप्रैल को पुलिस बुला कर प्रोडक्शन सस्पैन्ड के नाम पर मजदूरों को फैक्ट्री गेट के बाहर रोक दिया।

लार्सन एन्ड टूब्रो मैनेजमेंट ने तालाबन्दी की है पर लक्षण बता रहे हैं कि वह इसे मजदूरों की हड़ताल बतलायेगी।

लेबर डिपार्टमेन्ट तक भाग–दौड़ के अलावा लार्सन एन्ड टूब्रो मजदूरों ने अब तक बैनर और काले बिल्ले ही लगाये हैं। मजदूरों द्वारा अपनी ताकत बढ़ाने के लिये बम्बई स्थित विशाल फैक्ट्री के मजदूरोंसे सहयोग के लिये प्रयास तो आवश्यक हैं ही, फरीदाबाद में कागजी घोड़ों के अलावा अन्य कदम उठाने भी जरूरी हैं। ऐसे कदमों के बारे में विचार करने और उन्हें उठाने में देरी लार्सन एन्ड टूब्रो के मजदूरों के लिये घातक होगी।

लेबर कोर्ट ---- सुप्रीम कोर्ट

फरीदाबाद में मजदूर पक्ष की संगठित ताकत बहुत–ही कम है। ऐसे में नौकरी से निकाले जाने पर आमतौर पर मजदूर यहां लेबर डिपार्टमेन्ट—लेबर कोर्ट की राह पकड़ते हैं। यह बात यहां इस कदर तक बढ़ी हुई है कि विरोध की इस बहुत—ही कमजोर राह पर बढ़ने वाले वरकर ही नहीं बल्कि उनके साथी मजदूर भी कहते हैं, "लड़ रहे हैं। लड़ाई में डटे हैं।"

मजदूर को नौकरी से निकाले जाने के बाद के साल-छह महिने तो लेबर अफसर और डिप्टी लेबर कमिश्नर समझौते की ड्रामेबाजी में निकाल देते हैं। कुछ मजदूर इस दौरान अपना हिस लेते हैं, झुकने पर इक्के–दुक्के को ड्यूटी पर ले भी लिया जाता है और मामला खत्म हो जाता है। लेकिन जो मजदूर अड़ जाते हैं उनके केस चन्दीगढ भेज दिये जाते हैं। सुप्रीम कोर्ट का फैसला है कि मजदूरों केकेस फैसले के लिये लेबर कोर्ट को रेफर किये जायें पर चन्दीगढ में बैठे लेबर डिपार्टमेन्ट के साहब ऐसे केसों को "रेफर करने लायक नहीं" कह कर थोक में रिजेक्ट कर देते हैं। यह हरियाणा सरकार की पालिसी तथा चढ़ावों का मिला–जुला नतीजा है। साल–दो साल की चिट्ठी–पत्री और चन्दीगढ के खर्चों की वजह से कुछ मजदूर हिसाब ले लेते हैं। जो मजदूर नहीं मानते और हाई कोर्ट पहुंच जाते हैं उनके केस रेफर हो कर फरीदाबाद में लेबर कोर्ट में आ जाते हैं। लेबर कोर्ट में केस आ जाने के बाद मजदूर की छाती फूलती है पर तीन–तीन महिनों बाद तारीखों का सिलसिला फिर ऐसे मजदूरों की सांस उखाड़ देता है। वैसे लेबर कोर्ट को केस रेफर करते वक्त राज्यपाल की तरफ से लिखा जाता है कि केस तीन महिने में निपटा दिया जाये ------ तीन महिने में निपटाने वाली बात रस्म–भर है, राम नाम सत है। तीन महिने जब तक तीन साल को पार कर पाते हैं तब तक काफी मजदूर हिसाब ले लेते हैं और जज साहब को फैसला लिखने की जहमत से भी मुक्ति मिल जाती है। पर कुछ मजदूर हैं जो टट्टू की नाई अड़े रहते हैं। ऐसे मामलों में जज साहब को फैसला देना ही पड़ता है। ईस्ट इंडिया कॉटन मिल से निकाले हुये ऐसे ही एक मजदूर के मामले में जज ने फैसले में लिखा, "यह सिद्ध हो गया है कि मैनेजमेंट झूठ बोली है। मजदूर झूठ बोला है ------ हिसाब लगाने पर ऐसा लगता है। इसलिये.....इसलिये मजदूर को नौकरी से निकाला जाना ठीक है। हां, मजदूर को छंटनी भत्ता दे दिया जाये।" यहां तो मैनेजमेंट को हाई कोर्ट जाने की ही जरूरत नहीं। पर कुछ मामले होते हैं जहां जज साहब को भी मजदूर को ड्यूटी पर लिये जाने के फैसले मजबूरन लिखने पड़ते हैं। ऐसे कई मामलों में यह साहब ऐसे कमाल के नुक्ते फैसले में लिखते हैं कि मैनेजमेंट हाई कोर्ट जा कर पुनः सुनवाई के लिये केस को वापस लेबर कोर्ट रेफर करवा देती हैं ------- 12–13 साल लेबर कोर्ट में चलने वाले मुकदमों की जड़ में ऐसी कहानियां होती हैं। तीन महिनों को तेरह साल होते देख कर इलैक्ट्रोनिक्स फैक्ट्री के भगवानदास जैसे अड़ियल मजदूर भी हिसाब ले लेते हैं। फिर भी कुछ मामले रह जाते हैं जो लेबर अफसर–डिप्टी लेबर कमिश्नर—चन्दीगढ में साहब–लेबर कोर्ट—हाई कोर्ट—सुप्रीम कोर्ट के पड़ावों को पार कर जाते हैं। ऐसे मामलों में भी सुप्रीम कोर्ट का फैसला लिये ओसवाल स्टील के सुरेश की तरह लटके मजदूर फरीदाबाद में हैं।

इधर 'मजदूर मोर्चा' 16–30 अप्रैल के अंक में गुडइयर के मजदूर मोहम्मद यूसुफ की कहानी दी है। मार्च 1977 में टाइफाइड बुखार की वजह से आठ दिन ड्यूटी नहीं जा पाने के लिये यूसुफ को मैनेजमेंट ने नौकरी से निकाल दिया। नवम्बर 81 में औद्योगिक ट्रिब्यूनल फरीदाबाद ने यूसुफ को नौकरी पर बहाल करने का आदेश दिया। गुडइयर मैनेजमेंट चन्दीगढ हाई कोर्ट में चली गई। वहां चमत्कार हुआ और साल-भर में ही, सितम्बर 82 में हाई कोर्ट ने मैनेजमेंट की अपील खारिज कर दी। तो क्या ? गुडइयर मैनेजमेंट फरवरी 83 में सुप्रीम कोर्ट में चली गई। यहां रूटीन काम हुआ। दस साल से भी ज्यादा समय लेकर सुप्रीम कोर्ट ने मार्च 93 में फैसला दिया। मोहम्मद यूसुफ को नौकरी पर रखने का सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया। गुडइयर मैनेजमेंट को इससे मात्र इतनी दिक्कत हुई है कि यूसुफ की सांस 16 साल बाद भी चल रही है। लेकिन यह कोई खास दिक्कत नहीं है क्योंकि पैसे लेने के बाद यूसुफ शायद ही गुडइयर में नौकरी करे। और करेगा भी तो क्या ? इस बीच इस केस में गुडइयर मैनेजमेंट के वकील रहे लोग हाई कोर्टों के जज बन गये हैं।

मैनेजमेंट पक्ष और मजदूर पक्ष परस्पर विरोधी हितों वाले दो पक्ष हैं। इनके बीच फैसले ताकत के हिसाब से होते हैं। मजदूर पक्ष का संगठित होना, मजदूर पक्ष की ताकत बढ़ाना जरूरी है।

सम्पर्क --मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, एन. आई. टी. फरीदाबाद -121001 (यह जगह बाटा चौक के पास है)

पत्र

एक युवती के विचार

आज के आधुनिक युग में भी विवाह एक समस्या बना हुआ है। समाज में विवाह तरह-तरह के होते हैं जैसे कि सामाजिक विवाह और अदालती विवाह। सामाजिक विवाह में माता-पिता अपनी मर्जी से कोई लड़का पसन्द करते हैं और शादी तय करते हैं। इसमें लड़की की इच्छा-अनिच्छा को महत्व नहीं दिया जाता। अदालती विवाह में लड़का-लड़की एक दूसरे को देखते हैं, पसन्द करते हैं और शादी करते हैं। इसमें यह एक बहुत अच्छी बात है कि लड़का और लड़की, जिनको एक साथ जीवन बिताना है, उनकी पूरी मर्जी होती है---- एक दूसरे के विचारों से अवगत होने की वजह से उनमें एक-दूसरे को समझने में कठिनाई नहीं होती। मगर जहां माता-पिता की इच्छा का सवाल है, वह उन्हें नसीब नहीं होती। कभी लड़के के घरवाले राजी नहीं होते, तो कभी लड़की के घरवाले अड़ जाते हैं। बहुत-सी बाधाओं का सामना होता है ---- कोई तो अपना विचार बदल देते हैं मगर कोई चट्टान की तरह अडिग हो कर अपना कार्य करते हैं। आज जहां-तहां अदालती विवाह होते हैं मगर अभी ऐसा भी एक समाज का भाग है जहां इसको बहुत ही बुरी निगाह से देखा जाता है। अदालती विवाह का नाम सुना कि समाज के उन बुजुर्गों के सामने दो घर से भागे हुये युवक-युवती की तस्वीर आ जाती है और उनके लिये कभी अच्छी भावना उन बुजुर्गों के मन में नहीं आती।

दूसरी तरफ देखा जाये तो लड़की की इच्छा जाने बगैर जो विवाह होता है उसमें अनेक प्रकार की यातनायें युवती को सहनी पड़ती हैं। रोज अखबार में कितनी ही ऐसी खबरें पढ़ने को मिलती हैं जिनमेंकिसी युवती की जला कर हत्या कर दी जाती है तो कोई युवती हार कर आत्महत्या कर लेती है। मगर इसमें सारा दोष युवती को ही दिया जाता है। इसकी वजह जानने की कोई कोशिश नहीं करता। जिस घर में उसे भेजा जाता है उसके बारे में उसे कुछ भी पता नहीं रहता। अनायास और एक साथ वह इतने लोगों के बीच अपने आप को ॲडजस्ट नहीं कर पाती। इसमें अगर कोई पति अच्छा हो तो ठीक, नहीं तो उस युवती का जीवन दुखों से भर जाता है।

विवाह एक जुए की तरह है ----- पासा सीधा पड़ा तो ठीक और उल्टा पड़ा तो सब चौपट। यह दांव तो खेला जाता है माता-पिता द्वारा मगर भुगतना पड़ता है सब लड़की को। ऐसा आखिर क्यों होता है ? हमारे समाज में आज पुरूषों के बराबर स्त्रियों को मान्यतायें दी गई हैं ऐसा कहते हैं। मगर यह मान्यतायें, यह समानता तब कहां गायब हो जाती हैं जब इस तरह की स्थिति सामने आती है कि कोई विवाह असफल हो जाता है। उस समय लड़के को भी इस दोष का भागीदार क्यों नहीं बनाया जाता ? उस समय लड़की को कुलच्छनी, कुलटा जैसी कितनी ही विशेषताओं से पुरस्कृत किया जाता है।

आज समाज में जहां एक ओर प्रौढ़ शिक्षण शुरू हो गया है वहीं पर कहीं-कहीं यह स्थिति देखी जाती है कि बहुत-सी लड़कियों की पढ़ने की और कुछ बनने की इच्छा रहती है मगर बहुत कम उम्र में उनका विवाह कर दिया जाता है। विवाह के बाद की असफल और अप्रत्याशित स्थिति के लिये उनको तैयार ही नहीं किया जाता। इसमें बहुत-सा दोष संस्कृति का है तो जरा-सा दोष माता-पिता का भी है। आज हर माता-पिता बेटे को प्रथम और बेटी को दुय्यम स्थान देते हैं। इसीलिये बहुत-से घरों और परिवारों का वातावरण ही ऐसा होता है कि अच्छे से अच्छे परिवार में भी बेटी को जीवन-भर यही अहसास बना रहता है कि उसने संसार में जन्म लेकर मानो कोई घोर अपराध किया हो। वह सदा अपने परिवार पर बोझ बनी रहती है। उसे कभी कोई भार उठाने, दायित्व सम्भालने योग्य समझा ही नहीं जाता। न वह अपनी मर्जी से पढ़-लिख सकती है, न उठ-बैठ सकती है। क्या सच में उसका अस्तित्व कुछ भी नहीं ? विवाहोत्तर असफलताओं के लिये लड़कियों को दोषी ठहराने वाले यह क्यों नहीं सोचते कि इसमें लड़के की भी और लड़के के घरवालों की भी गलती हो सकती है। लड़की में भी सब के समान दिल और दिमाग होता है, वह भी जीवित है, मुर्दा नहीं। इस सारे झमेले में लड़का एक मूक-दर्शक बन के रहता है।

जहां एक ओर इस तरह के डरपोक और स्वार्थी युवक समाज में हैं वहीं दूसरी ओर कुछ सुलझे हुये और प्रगतिशील विचारों के युवक भी हैं जो अपनी पत्नी को अपना सच्चा जीवन साथी मानते हैं और उनको अपने बराबर का दर्जा देते हैं। मगर इनको भी समाज की बुराइयों का सामना करना पड़ता है। अपने घरवालों को नम्रता से समझाने से ले कर बगावत तक करनी पड़ती है। मगर इनको प्रोत्साहन देने की बजाय इनको बुरा-भला कहने से भी समाज के कुछ उसूलवादी कहलाने वाले लोग चूकते नहीं। उनका उत्साह ठंडा करने की नाकाम कोशिशें यह लोग करते हैं। यह युवक किसी जाति और धर्म को मान कर विवाह नहीं करते। इनको किसी साक्षीदार की जरूरत नहीं होती। अपने दिल से एक -दूसरे की पति-पत्नि मान कर उस रिश्ते को निभाना महत्वपूर्ण है, न कि किसी को जाने-पहचाने बगैर विवाह कर के जीवन-भर पछताना।

काश आज सारे लोग यह बात जान लें, समझ लें और अपने जीवनसाथी के बारे में पूरी तरह सोच कर और उसके विचारों को जान कर विवाह के बारे में तय करें। जहां तक माता-पिता का सवाल है, उनको इस बात का पूरा-पूरा महत्व समझाना चाहिये। जो कार्य हम कर रहे हैं वह बात, वह कार्य पूरी तरह ठीक है इस बात का अहसास जब तक खुद को नहीं होता तब तक वह बात हम किसी और कोनहीं समझा सकते। इसलिये यह विवाह योग्य है, यह बात सबसे पहले युवक-युवती खुद समझ लें तभी वह अपने माता-पिता को, समाज को समझा सकते हैं।

गीता

बिचौलियों के तौर तरीके

औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 के तहत श्रम विभाग तथा श्रम न्यायालयों में लम्बित श्रमिकों एवं प्रबन्धकों के बीच विवादों के सम्बन्ध में उप श्रम आयुक्त फरीदाबाद ने एक नोटिस द्वारा सम्बन्धित पक्षों को निर्देश दिया कि :

1. श्रमिकों के विवाद में किसी भी पक्ष की तरफ से पेशेवर वकीलों को विवादों में शामिल नहीं होने दिया जायेगा;
2. अगर किसी पक्ष की तरफ से कोई वकील पेश होगा तो उस वकील को अथारिटी को लिखित आश्वासन देना होगा कि वह पेशेवर वकील नहीं है;
3. अगर कोई वकील जो किसी संगठन में पदाधिकारी अथवा संगठन का सदस्य हो वह विवाद में किसी पक्ष की तरफ से पेश होगा तो उसके साथ सम्बन्धित पक्ष का होना अनिवार्य होगा।

श्रम विभाग का उपरोक्त सूचना पत्र औद्योगिक विवादों में पेश होने वाले पेशेवर वकीलों के लिये मुसीबत बन गया और श्रम विभाग में मजदूरों मालिकों की सामुहिक वार्ता द्वारा विवादों का निदान होने लगा। पेशेवर लोगों में छटपटाहट शुरू हो गई। एक संगठन तुरत-फुरत में बनाकर उसका चुनाव गुप्त मतदान द्वारा लेबर कोर्ट के सामने कर के श्रम न्यायालयों में अपना दबदबा बनाने का कुचक्र शुरू हुआ। कानूनों के विशेषज्ञ अपने संगठन का विधान, नियम एवं उपनियम तक बनाना भूल गये।

सुभाष

[पत्र हमने कुछ छोटे कर दिये हैं।]

एक नारी सम्मेलन की रिपोर्ट

16 से 19 अप्रैल तक कानपुर में प्रथम उत्तर भारत नारी मुक्ति संघर्ष सम्मेलन हुआ। इसमें राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली, जम्मू-कश्मीर और उत्तर प्रदेश के कई नारी संगठनों की सदस्यों ने हिस्सा लिया। लगभग 500 महिलायें इस सम्मेलन में इकट्ठी हुई थी। मैं इस सम्मेलन में मजदूर मंच, फरीदाबाद की तरफ से पर्यवेक्षक के तौर पर गई थी।

दूर-दूर से आई महिलाओं से उनके दुख-दर्द की कहानियां सुन कर मुझे बहुत कष्ट हुआ। सम्मेलन में कई विषयों पर चर्चा हुई। नाटक, गीत-संगीत, प्रदर्शनियां और वीडियो फिल्में दिखाई गई। नैनीताल, कानपुर, दिल्ली, सहारनपुर, जयपुर, प्रतापगढ़, गाजीपुर और नेपाल से आई कुछ महिलाओं से मेरी बातचीत हुई। सम्मेलन के आयोजकों ने रहने और खाने का अच्छा प्रबन्ध किया था।

पर्यवेक्षक होने के बावजूद मुझे भी अपनी बात कहने का मौका दिया गया। मैंने सम्मेलन में यह कहा----

"मैं उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के एक गांव में दलित परिवार में पली हूं। मेरे पिताजी जिओलोजिकल सर्वे में चपरासी थे। गांव में स्कूल में पढ़ने वाली पहली लड़कियां हम तीन बहनें थी। इसका गांव व पड़ोस में काफी विरोध हुआ था।

मैं जब आठवीं में पढ़ रही थी तब मेरी शादी कर दी गई। ससुराल वालों के विरोध करने पर मेरी पढ़ाई बन्द करवा दी गई।

शादी के दो साल बाद मैं ससुराल गई। मेरे पति उस समय हाई स्कूल में पढ़ रहे थे। दो साल बाद वे बस्ती में पालिटेक्निक में डिप्लोमा करने लगे। मैं इस पूरे दौर में घर का व खेती का काम-काज करती रही। डिप्लोमा करने के बाद मेरे पति दो साल तक बेरोजगार रहे। फिर वे अप्रेंटिस के तौर पर फरीदाबाद पहुंचे। तब उन्हें परिवार की जकड़ से कुछ आजादी मिली। मेरे पति ने मुझे पढ़ने को उत्साहित किया और मैट्रिक के मेरे फार्म भर दिये। लेकिन परिवार द्वारा टांग अड़ाने से मैं परीक्षा नहीं दे पाई।

अप्रेंटिस खत्म होने के बाद भी मेरे पति को नौकरी नहीं मिली। वे नौकरी ढूंढते हुये फरीदाबाद में रहने लगे और उधर गांव में परिवारवालों ने मेरा जीना हराम कर दिया। इधर-उधर छुटपुट काम करते हुये मेरे पति तंग हो कर मुझे फरीदाबाद ले आये।

हमारे दो बच्चे भी हैं। शहर में बिना पैसे के जी ही नहीं सकते। पति के साथ-साथ मैंने भी नौकरी ढूंढनी शुरू की। यह 1991 की बातें हैं।

मैं कुछ दिन गांव में प्रौढ़ शिक्षा में पढ़ा चुकी हूँ फिर भी पहली बार जब एक फैक्ट्री में काम मिला तब मैं बहुत घबराते हुये काम पर गई। पहली बार मैंने ईस्ट इंडिया एक्सपोर्ट फैक्ट्री में थ्रेड कटिंग का कामकिया। उस फैक्ट्री में तीन सौ महिला और तीन सौ पुरूष मजदूर थे। इन छह सौ मजदूरों में सिर्फ पचास--साठ मजदूर परमानेन्ट थे। बाकी हम लोग कैजुअल व ठेकेदारों के मजदूर थे। सरकारी रेट से उस समय वेतन 904 महिना था पर हम कैजुअल व ठेकेदारों के मजदूरों को मैनेजमेंट 600 रूपये ही देती थी। महिलाओं और पुरूषों, दोनों को 600 रूपये महीना ही मिलते थे। लेकिन महिना-भर काम हमें मुश्किल से ही मिलता था। दस-बीस दिन में हमें ब्रेक दे दिया जाता था। छह महिने में मुझे तीन बार, 12 दिन, 7 दिन और 8 दिन इस फैक्ट्री में काम मिला। सब मजदूरों को इस फैक्ट्री में 12 घन्टे ड्यूटी करनी पड़ती थी। हम महिला मजदूरों को कभी-कभी 12 घन्टे ड्यूटी करने के बाद भी जबरन रात को क करने के लिये रोक लिया जाता था। मना करने पर फौरननौकरी से निकाल दिया जाता था। 12 घन्टे काम के बाद भी हमें फैक्ट्री से सैक्यूरिटी वाले तभी जाने देते थे जब हमारी हथेली पर सुपरवाइजर दस्तखत कर देता था। बीच-बीच में मैंने कई जगह काम किया। एक वर्कशाप में मुझे 400 रूपये महीना देते थे। वहां मैं लखानी के जूतों में लेटस लगाती थी। एक जगह मैंने प्लास्टिक की कबाड़ धोने का काम किया जिसके लिये मुझे 550 रूपये महिना मिलते थे। ड्यूटी आठ घन्टे की थी पर छुट्टी नहीं मिलती थी। बन्टी जूता फैक्ट्री में मैने 550 रूपये महिना में काम किया। फ्रिज के लिये बल्ब का काम करने वाली एक वर्कशाप में मैंने 500 रूपये महिना पर काम किया। हर जगह महिना-पन्द्रह दिन या डेढ महिने में मुझे ब्रेक दे दिया गया। बीच-बीच में मुझे खाली भी बैठना पड़ जाता था। बार-बार काम ढूंढने से मैं परेशान थी कि मुझे 350 रूपये महिना एक स्कूल में पढ़ाने का काम मिला। मैंने यह काम ले लिया क्योंकि एक तो इसमें आये दिन ब्रेक का डर नहीं था और फिर ट्यूशन कर के भी मैं कुछ पैसे कमा सकती थी।

मैंने जहां-जहां काम किया है वहां कैजुअल और ठेकेदारों के वरकरों को, चाहे वे पुरूष हों चाहे महिला, वेतन बराबर मिलता था। लेकिन मिलते हैं आठ घन्टे के पांच-छह सौ रूपये महिना ही। ज्यादातर जगह 12 घन्टे जबरन काम करना पड़ता है।

मेरे पति को भी 400 से 600 रूपये महिना पर काम करना पड़ा है। पर हां, उन्हें बीच-बीच में घर बैठना मुझसे भी ज्यादा पड़ा है। अब जा कर दो महिनों से उन्हें ओखला की एक फैक्ट्री में 900 रूपये महिना पर काम मिला है।

मैंने अपने उदाहरण इसलिये दिये हैं ताकि हालात की एक झलक आपको मिल सके।

मजदूरों की समस्याओं, महिला मजदूरों की समस्याओं के बारे में भी इस सम्मेलन को विचार करना चाहिये।"

---रामपति

ईरान

इन्शा अल्लाह बनाम मजदूर संघर्ष

ईरान में खुदा के बन्दों की सरकार है। इन्शा अल्लाह इस्फहान स्टील मिल मैनेजमेंट आने वाले 5 वर्षों में बीस हजार मजदूरों की छंटनी करेगी। ईरान सरकार की इस विशाल कम्पनी के मैनेजिंग डायरेक्टर कहते हैं, "स्टील मिल की मदद से प्रायवेट सर्विस कम्पनियां बनाई गई हैं जो कि आधुनिकीकरण द्वारा फालतू बनाये जाने वाले बीस हजार मजदूरों को काम देंगी।"

1980 में ईरान सरकार ने अहवाज स्टील इन्डस्ट्री में से हजारों मजदूरों की छंटनी की थी। उस समय सरकार प्रोडक्शन को-आपरेटिवों की एक योजना मजदूरों के गले उतारने में सफल हो गई थी। ईरान सरकार का कांटा जिसे मजदूर निगल गये थे वह यह था : "मजदूर अपने खुद के मालिक होंगे। को-आपरेटिव मजदूरों की अपनी स्वयं की होंगी। को-आपरेटिव का उत्पादन मजदूरों का अपना होगा।" पर शीघ्र ही उन को-आपरेटिवों का दिवाला निकल गया था और नौकरी के साथ ही मजदूरों की पाई-पाई भी जाती रही थी।

1981 में ईरान सरकार ने वह स्कीम इस्फहान स्टील मिल वरकरों के लिये भी पेश की पर अपने साथी मजदूरों को लगी ठोकरों से सबक ले कर स्टील मिल मजदूरों ने सरकार की एक नहीं सुनी। ईरान सरकार को तब वह योजना त्यागनी पड़ी थी।

1984 में नये नाम से ईरान सरकार ने वही योजना कन्स्ट्रक्शन क्षेत्र से 18 हजार मजदूरों की छंटनी केलिये प्रस्तुत की। सरकार ने कहा था कि मजदूर अपने पैसों से अपनी कम्पनियां बनायें, स्टील मिल उन कम्पनियों को ठेके पर काम देगी। ईरान सरकार की उस योजना का जवाब मजदूरों ने हड़ताल सेदिया था। एक महिने की हड़ताल के बाद सरकार झुकी ----- इन्शा अल्लाह को मजदूरों के संघर्ष ने पीछे धकेल दिया था।

मंडी के लिये उत्पादन की मजबूरियों ने ईरान सरकार के लिये इस्फहान स्टील मिल का आधुनिकीकरण और बीस हजार मजदूरों की छंटनी को अरजेन्ट बना दिया है। फर्क यह है कि इस बार छंटनी की बात मैनेजमेंट खुलेआम कर रही है।

इन्शा अल्लाह का अर्थ मंडी के लिये उत्पादन की अन्धी शक्तियां हैं। मार्केट की जरूरतों के मुताबिक प्रोडक्शन के स्थान पर मनुष्यों की आवश्यकता के अनुसार उत्पादन के लिये संघर्ष आज इन्शा अल्लाह बनाम मजदूर संघर्ष का सचेत रूप मात्र है।

[सामग्री हमने फारसी और अंग्रेजी में प्रकाशित वरकर टुडे के अप्रैल 93 अंक से ली है।]

RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73

डाक्टरों की हड़ताल

29 अप्रैल को दिल्ली के लोकनायक अस्पताल, गुरू नानक नेत्र चिकित्सा केन्द्र, जी बी पन्त अस्पताल और मौलाना आजाद मेडिकल कालेज के जूनियर डाक्टरों ने हड़ताल कर दी। 30 अप्रैल को दोपहर में हड़ताली डाक्टरों ने रैली निकाली। उपराज्यपाल ने उनसे मिलने से इनकार कर दिया। डाक्टरों की साझा संर्घष समिति के अनुसार उपराज्यपाल निवास के अधिकारियों ने उनके साथ दुर्व्यवहार भी किया। अस्पतालों के प्रशासन--मैनेजमेंटों ने धमकी दी कि हड़ताली डाक्टरों ने फौरन काम शुरू नहीं किया तो उन्हें नौकरी से निकाल दिया जायेगा, उनके नाम काली सूची में डाल दिये जायेंगे आदि-आदि। दिल्ली जूनियर डाक्टर्स फेडरेशन ने हड़ताली डाक्टरों के समर्थन में सफदरजंग, जी टी बी, बाड़ा हिन्दूराव, सुचेता कृपलानी, दीन दयाल उपाध्याय आदि अस्पतालों में हड़ताल की बात की। पहली मई को समझौते के बाद अस्पतालों में काम शुरू हो गया।

डाक्टरों की हड़ताल की वजह एक मरीज की मृत्यु पर उसके रिश्तेदारों द्वारा लोकनायक अस्पताल के एक डाक्टर की पिटाई करना और उसके खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज करना था। कांग्रेस पार्टी के छात्र संगठन ने हड़ताली डाक्टरों के खिलाफ बयान दिया।

डाक्टरों की साझा संर्घष समिति के मुताबिक मरीजों की देखभाल किसी डाक्टर की व्यक्तिगत जिम्मेदारी नहीं होती बल्कि इसके लिये पूरा संस्थान जिम्मेदार होता है। अगर लापरवाही का यह मामला है भी तो इसकी पूरी जिम्मेदारी पूरे संस्थान पर आयेगी। इसलिये हड़ताली डाक्टर लोकनायक अस्पताल के एक डाक्टर के खिलाफ दायर आपराधिक मामले को वापस लेने की मांग कर रहे हैं। डाक्टरों की यह भी मांग है कि लोकनायक अस्पताल परिसर से पुलिस चौकी हटाई जाये।

प्रशासन--मैनेजमेंट के प्रतिनिधि एक मेडिकल सुपरिटेंडेंट ने साझा संर्घष समिति की दलील को बेबुनियाद बताया।

हमारे विचार से हड़ताली डाक्टरों की साझा संर्घष समिति की दलील ठोस आधार पर है। आइये इस मामले को थोड़ा कुरेद कर देखें।

शिल्प का उद्योग बनना, क्राफ्ट का इन्डस्ट्री बनना विज्ञान अनुसन्धाम, शिक्षा, व्यापार आदि कुछ क्षेत्रों की ही तरह चिकित्सा में भी हाल ही की घटना है। भारत जैसे इलाकों में तो यह हमारी आंखों के सामने हो रहा है------तीव्र परिवर्तन के दौर में होने की वजह से एडजस्ट के दौरान की कटुता तो यहां बोनस में है। वैज्ञानिकों, डाक्टरों, इंजिनियरों, अध्यापकों, व्यापारियों का हकीकत में शिल्पियों से इन्डस्ट्रीयल-टैक्नीकल वरकरों में तब्दील हो जाना और विचारों-ख्वाहिशों-आदतों में क्राफ्ट्समैन-कलाकार की छाप का रहना यहां साफ-साफ देखा जा सकता है।

शिफ्टों में ड्यूटी, भारी वर्क लोड, कम वेतन और सुविधाओं का अभाव डाक्टरों के जीवन का, विशेषकर जूनियर डाक्टरों की जिन्दगी का हकीकी पहलू बन गया है। फरीदाबाद की एक डाक्टर के अनुसार एक अस्पताल की मैनेजमेंट ने उन्हें कहा, "डाक्टर तो हमें जितने चाहियें मिल जायेंगे, हमें तो मरीज चाहियें।" ऐसे में डाक्टर बनने पर खिलाई जाती हिप्पोक्रेटस कसम का भी वही हाल हो जाता है जो मंडी के लिये प्रोडक्शन-पैसे के दबदबे के दौर में रिश्वतखोरी-भ्रष्टाचार विरोधी नैतिक शिक्षा-प्रवचनों का होता है। और, बस ड्राइवरों-कन्डक्टरों पर लगने वाले आरोप डाक्टरों पर भी लगने लगते हैं।

डाक्टरों-वैज्ञानिकों-इंजिनियरों-अध्यापकों का हकीकत में मजदूर बन जाना मजदूर आन्दोलन के बौद्धिक स्रोत में भारी वृद्धि है। लेकिन इन नये वेज वरकरों द्वारा स्वयं को मजदूर स्वीकार करने में आना-कानी क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन में महत्वपूर्ण योगदान की इनकी क्षमता को प्रभावित कर रही है। मजदूर वर्ग को इसकी गतिशीलता, डायनैमिक्स में देखना और कार्यपद्धतियों में परिवर्तनों द्वारा मजदूर वर्ग की संरचना में बदलावों को आंकलन में शामिल करना मनोगत बाधाओं को दूर करने में सहायक होगा।

अतः हड़ताली डाक्टरों की साझा संघर्ष समिति की यह दलील तथ्यगत है कि अब आमतौर पर मरीजों की देखभाल किसी डाक्टर की व्यक्तिगत जिम्मेदारी नहीं होती बल्कि इसके लिये पूरा संस्थान जि[illegible] होता है। पर बात इतनी ही नहीं [illegible]। प्रत्येक संस्थान वर्तमान व्यवस्था का अंग है। और मन्डी के लिये प्रोडक्शन वाली वर्तमान व्यवस्था का संकट प्रत्येक संस्थान ---- अस्पताल-फैक्ट्री-कालेज --में वर्क लोड में वृद्धि और वेतन व सहुलियतों में कटौती के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है। मंडी चूंकि विश्व मंडी है इसलिये आज यह दुनियां के हर क्षेत्र की हकीकत है। जाहिर है कि अन्य मजदूरों की ही तरह डाक्टरों की परेशानियां भी आने वाले दिनों में और बढेंगी। ऐसे में दिल्ली के हड़ताली डाक्टरों कीदूसरी मांग ---- अस्पताल परिसर से पुलिस चौकी हटाई जाये ----एक दिशा को इंगित कर रही है। बढ़ती परेशानियों के खिलाफ संघर्षों-टकरावों के बढ़ने की सम्भावना है और इसका पूरक होगा बढ़ता पुलिस दमन । पुलिस-फौज का तन्त्र समाज की रग-रग को दुखा रहा है। देश-राष्ट्र मंडी के लिये प्रोडक्शन के कवच हैं और इन कवचों के कवच बनी हैं हर देश की पुलिस-फौज। इसलिये अपनी परेशानियों की जड़ : मनुष्यों की जरूरतों के अनुसार प्रोडक्शन करने की बजाय मंडी-मार्केट की आवश्यकताओं के मुताबिक हो रहे प्रोडक्शन से पार पाने के लिये एक अस्पताल के परिसर से पुलिस चौकी हटवाने के लिये कार्यवाही मात्र एक कदम है उस राह पर जो कि दुनियां को जकड़े पुलिस-फौज के तन्त्रों के पृथ्वी से नामों-निशान मिटाने की राह है।

दिल्ली में हड़ताली डाक्टरों का औहाथ मर्ज की नब्ज पर था।

नेपाल बैट्री में हड़ताल

काठमान्डु स्थित नेपाल बैट्री कम्पनी के मजदूर 21 जनवरी से हड़ताल पर हैं। यह कम्पनी यूनियन कार्बाइड की शाखा है।

1984 में काठमान्डु में फैक्ट्री की स्थापना के बाद से वहां मजदूरों और मैनेजमेंट के बीच हड़तालों और तालाबन्दियों समेत दस बड़े टकराव हो चुके हैं। कई मजदूर इस दौरान नौकरी से निकाल दिये गये हैं।

विभिन्न किस्म की बैट्रियां बनाने वाली नेपाल बैट्री फैक्ट्री में मजदूरों को हानिकारक रसायनों से काम करना पड़ता है। इस वजह से मजदूरों को स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वर्तमान संघर्ष में स्वास्थ्य और सुरक्षा के मुद्दे उल्लेखनीय हैं। यह ध्यान में रखने की जरूरत है कि यूनियन कार्बाइड की भोपाल स्थित फैक्ट्री से रिसी गैस ने हजारों लोगों की जान ली थी।

नेपाल बैट्री के हड़ताली मजदूरों की कुछ अन्य मांगें हैं---

1. एमरजैन्सी गाड़ी और टेलीफोन की सुविधा,
2. वरकर को 240 दिन बाद पक्का किया जाये,
3. श्रमिक के दो बच्चों को शिक्षा भत्ता दिया जाये,
4. वेतन, मकान, भोजन व सुविधाओं को बेहतर किया जाये।

मैनेजमेंट ने मजदूरों की डिमान्डें मानने से इनकार कर दिया है और हड़ताल को गैरकानूनी घोषित कर दिया है। नेपाल सरकार ने भी इस हड़ताल को गैरकानूनी घोषित कर दिया है हालांकि हड़ताल शुरू करने से पहले मजदूरों ने जटिल कानूनी प्रावधानों का पूरा पालन किया था।

हड़ताल तोड़ने के लिये नेपाल बैट्री मैनेजमेंट द्वारा भाड़े पर लिये गुन्डे हड़ताली मजदूरों के घरों में जा कर उन्हें और उनके परिवारों को धमका रहे हैं तथा मैनेजमेंट सक्रिय मजदूरों को नौकरी से निकालने की धमकी दे रही है।

[जानकारी हमें वरकस सोलिडैरिटी एलायन्स से प्राप्त हुई है।]

बोल्टन

14/3 मथुरा रोड़ स्थित बोल्टन फैक्ट्री में स्पीकर बनते हैं। यहां 45 परमानेन्ट और दस कैजुअल वरकर हैं------परमानेन्ट में 15 महिला मजदूर हैं।

सरकारी कानूनों की धज्जियां उड़ाते हुये ओवर टाइम सिंगल दिया जाता था फिर भी बोल्टन में ओवरटाइम काम डेली होता था। 3 मई को अचानक "काम नहीं है" कह कर मैनेजमेंट ने 16 मजदूरों का ले आफ लगा दिया। 5 मई को सब वरकरों का एक महिने ले आफ का नोटिस मैनेजमेंट ने फैक्ट्री गेट पर लगा दिया। इस नोटिस में यह भी कहा गया कि हाजरी लगवाने के लिये मजदूर फैक्ट्री गेट पर नहीं आयें। इस पर 5 मई को सब मजदूर फैक्ट्री गेट पर धरने पर बैठ गये।

बोल्टन मैनेजमेंट ने दिल्ली में तीन-चार फैक्ट्रियां खोल ली हैं और वह फरीदाबाद फैक्ट्री के परमानेन्ट मजदूरों की छंटनी करना चाहती है। इसीलिये मैनेजमेंट ने परमानेन्ट मजदूरों की ले आफ की है जबकि कैजुअल वरकर फैक्ट्री में काम कर रहे हैं।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं सम्पादक शेरसिंह के लिए जे के ऑफसैट दिल्ली से मुद्रित किया।